विचारने योग्य हैं। हमारी जातिमें पञ्चातियोंकी पद्धति पुरानी है। ऐसा कोई छोटासे छोटा भी ग्राम न होगा जहां पञ्चायती न हो। सामाजिक वा जातिसम्बन्धी जितने काम होते हैं वे सब पञ्चातियों द्वारा निर्णय किये जाते हैं। पञ्चायतियां हैं पुरानी, पर उनका उपयोग ठीक ठीक किया जाता होगा इसमें हमें पूर्ण सन्देह है। क्योंकि हम कई जगहकी पञ्चातियोंकी हालत आंखोंसे देख चुके हैं, उनसे जान पड़ता है कि वे जिस उद्देश्यको लेकर स्थापित की जातीं हैं उसका सरासर खून किया जाता है। हम अवकाशानुसार इन्दौर, खातेगांव, सोनकच्छ, रतलाम, बड़नगर आदिकी पञ्चायतियोंका विस्तृत हाल सुनानेकी कोशिश करेंगे। तब पाठके जान सकेंगे कि हमारा उक्त कथन कहांतक ठीक है

हम अपनी जातिकी अवनतिके बहुतसे कारणोंमें एक कारण पंञ्चायतियोंकी दुर्व्यवस्था भी कहें तो कुछ अनुचित न होगा। समाजकी उन्नति और अवनतिका सब दारमदार पञ्चायतियोंपर निर्भर होता है। हम बहुत दिनोंसे इस बातका प्रयत्न करते हैं कि हमारी जातिकी सामाजिक, नैतिक, धार्मिक और आर्थिक अवस्था बिगड़ी हुई है उसका किसी तरह सुधार होकर जातिकी उन्नटि हो, पर उसमें हमें कुछ भी सफलता अभीतक प्राप्त नहीं हुई। जब हम अपनी सामाजिक और आर्थिक दशाका विचार करते हैं तब चित्त कितना खेदित होता है यह बतलानेको हमारे पास कोई शब्द नहीं है। कौन नहीं जानता कि आज हमारी जातिमें वृद्ध-विवाह, कन्याविक्रय फिजूलखर्ची आदि भयंकर कुरीतियां बहुत जोर शोरके साथ जारी हैं और उनके द्वारा बेहद हानि हो रही है।

जिन लोगोंके पास रुपया होता है, वे बूढ़े हों, कल ही उनके स्मशान-वासकी तैयारी क्यों न हो, पर तब भी उनका सहजमें—बिना किसी तकलीफके—विवाह हो जाता है और जिनके पास रुपया नहीं है वे हजार सिरपटकें उनकी कोई बात भी नहीं पूछता। न पञ्चायतियां ही उनपर ध्यान देतीं हैं। परिणाम यह होता है कि जातिमें नवयुवकोंके अविवाहित रहनेसे उसकी वृद्धिमें बड़ा भारी धक्का पहुंचता है और दूसरे उनका नैतिकचरित नष्ट होकर जातिमें कलङ्कियोंकी ही भरमार हो जाती है। हमारा विश्वास नहीं कि प्रकृतिके नियमानुसार अपनी अवस्थाके धर्मपर कोई विजय पा सके और ऐसा धीर वीर हो भी तो हजारोंमें एक। सर्व साधारणमें, उसपर भी अपढ़ लोगोंमें ऐसी शक्तिका होना तो बहुत ही कठिन है। और जिनका नैतिकचरित जब बिगड़ा हुआ है तब उनका धार्मिकजीवन सुरक्षित रह जाय यह कभी संभव नहीं। एक सामाजिक अवस्थाके बिगड़नेसे नैतिक और धार्मिक दशा धूलमें मिल जाती है। रही आर्थिक अवस्था सो इसके लिए हमारी जातिमें फिजूलखर्ची मुहँबाँये बैठी हुई है। चाहे विवाहशादियोंमें परिमाणसे अधिक रुपया खर्च हो जाय, रण्डियोंके नाच और फुलवारीमें चाहे हम अपना सर्वस्व झोंकदें, मरे हुओंके नुकते आदिमें अनापसनाप खर्चकर चाहे भीख मांगनें लग जायँ, मुकद्दमा—बाजीमें चाहे हम बाबाजी बनकर दूसरोंके घर घर भटकते फिरें, पर तब भी हम अपने पैसेको अपनी जाति या देशके उपकारमें कभी नहीं लगायँगे! परिणाम यह होगा कि इससे जाति दिनों दिन दरिद्र होकर अधिक अधिक अवनतिके गड्ढेमें गिरती जायगी और एक वह दिन आयगा

कि इसे अपनी उन्नतिसे बिल्कुल हाथ धो बैठना पड़ेगा । यही नहीं किन्तु इसे अपना अस्तित्त्व रखना भी असंभव हो जायगा।

ये सब बुराइयां क्यों पैदा होतीं हैं? क्यों हम इनसे घृणा नहीं करते? हानिपर हानि उठाकर भी क्यों हमें सुबुद्धि नहीं सूझती? हम कह सकते हैं कि इनमें बहुत भी ऐसी बुराइयां हैं जो हमारी पञ्चायतियोंकी बेपरवाहीसे हो रहीं हैं। उन्हें सब कुछ अधिकार होते हुए भी वे जातिकी उन्नतिकी चिन्ता नहीं करतीं हैं। जहां वृद्धविवाह, कन्याविक्रयकी दारुण प्रथा जारी है, यदि वहांकी पञ्चायती चाहे तो वह देखते देखते उन्हें जाति-से दूर कर सकती है। जहां विवाहमें हजारों रुपया खर्च किया जाता है यदि वहांकी पञ्चायती चाहे तो सर्व साधारणके हित-के लिए और जातिसुधारके लिए सामाजिक रीति रवाजोंमें कम खर्च कराकर उन्हें सम्पन्न करा सकती है। जहां विवाहमें दो दो चार चार रसोई की जाती है, अथवा और भी बहुतसी ऐसी जगह हैं जहां बहुत खर्च करना पड़ता है, वहां क्या पञ्चा-यतियां यह नहीं कर सकती कि दो रसोईकी जगह एकहीसे अथवा यदि वर या कन्याके घरवालोंकी हालत बहुत खराब हो तो बिना रसोई किये ही उनका काम निकलवादें? उसी तरह जहां पांचसौ रुपया खर्च करने पड़ते हैं वहां सौ रुपयेहीमें सब प्रबन्ध करदें? अवश्य कर सकतीं हैं। इसमें उनकी किसी तरहकी हानि नहीं है। आज भारतमें ऐसी अनेक जातियां मिलेंगी जो सर्व साधारणके हितके लिए किसीपर अधिक दबाव न डालकर बहुत थोड़ेमें उनका कठिनसे कठिन काम पूरा करा देतीं हैं।

हमने यहा पारसियोंमें विवाह होते देखे हैं। उनका विवाह बहुत थोड़े समयमें हो जाता है। खर्चके लिए जिसकी जैसी स्थिति होती है उसका उसी तरह काम चल जाता है। जिनकी स्थिति बहुत अच्छी होती है वे अपने विवाहमें जरा अधिक खर्च करते हैं, अधिक जातिबन्धुओंको एकत्रित करते हैं और जो बेचारे गरीब होते हैं वे अपने हेल मेलके लोगोंको ही बुलाकर अपना काम पूरा कर लेते हैं। उन्हें कोई न तो बुरा बतातां है और न समाज उनसे नफरत करता है। खैर, हम दूसरोंकी रीति नीतिपर क्यों ध्यान दें, जैनसमाजकी भिन्न भिन्न जातियोंके रीति रवाजपर ही क्यों न अपनी जातिके लोगोंका ध्यान आकार्षित करें। जैनियोंमें परवारजाति एक बड़ी जाति है। उसके बहुतसे रीति रवाज ऐसे हैं जो थोड़े खर्चमें किये जा सकते हैं। खण्डेलवालजातिमें यदि गरीबसे गरीबका भी विवाह हो तो उसे कमसे कम पंद्रासौ रुपया तो खर्च करना ही चाहिए। यदि उसके पास इतना रुपया नहीं है तो संभव नहीं कि उसका विवाह हो जाय। और परवारोंमें यदि किसी गरीबका विवाह होना है तो उसके लिए दोसौ रुपया पर्याप्त हैं। इस थोड़ेसे खर्चमें उसका काम अच्छी-तरह पूर्ण हो जायगा। इसी तरह पद्मावती–पुरवार, कठनेरा आदि बहुत सी जातियां ऐसी हैं जिनका काम थोड़े खर्चमें भी आसानीसे निकल सकता है। इसका कारण, एक तो इन जातियोंमें हम सरीखी कन्याविक्रयकी भयंकर रीति प्रचलित नहीं है। इनकी पञ्चायतियोंने इससे जातिको बहुत कुछ अछूती रक्खी है। दूसरे, बहुतसे रीति रवाज भी वक्तपर ढीले कर दिये जाते हैं।

इसलिए इन जातियोंमें ऐसे गरीब भी बहुत कम निकलेंगे जो अविवाहित हों।

खण्डेलवालजातिकी लीला अपरम्पार है। उसमें तो एक तिहाई ऐसे लोग निकलेंगे कि जो विवाहके योग्य होनेपर भी वे अविवाहित हैं। ऐसी हालतमें यदि उनका नैतिकचरित्र बिगड़ जाय तो आश्चर्य क्या? जो खण्डेलवालजातिमें जन्म लेकर गरीबके घर पैदा हुआ है तो समझो कि उसके समान अभागा कोई नहीं है। इससे अधिक दुःख और खेदकी बात क्या होगी? अमरीका सरीखे देशमें उत्पन्न होनेवाला गरीबसे गरीबका लड़का भी वहांके राज्यका राजा होनेकी उत्कंठा कर सकता है, कर ही नहीं सकता किन्तु होता भी है। पर खण्डेलवालजातिका एक गरीबका लड़का यह भी इच्छा नहीं कर सकता कि मेरा विवाह हो जायगा! जिस जातिकी इतनी बुरी हालत है वह मरी जाति क्या अपनी उन्नति कर सकेगी? क्या उससे बेचारे साधारण लोगोंका उपकार होगा? कभी नहीं। हमारी पञ्चायतियोंकी बेपरवाहीसे यह तो हुई सामाजिक, नैतिक, आर्थिक और धार्मिक अवस्थाओंकी दुर्दशा, अब जरा यह भी जाननेकी जरूरत है कि जो काम खास पञ्चायतियोंके द्वारा निर्णय किये जानेके योग्य हैं, उनका भी कुछ वे पालन करतीं हैं या नहीं? और उनका निर्णय–व्यवस्था–करने वाले योग्य होते हैं या नहीं?

यह हम ऊपर लिख आये हैं कि पञ्चायती एक महती शक्ति है। उसे बहुत अधिकार प्राप्त हैं। यदि वह न्याय करते समय किसीका पक्षपात न कर सच्चा न्याय करे तो हम कह सकते

हैं कि उसके फैसलेकी उतनी ही मान्यता होगी जितनी कि एक पार्लियामेंटकी । पाठक, यह स्वयं विचार सकते हैं कि जो मामले पञ्चातियों द्वारा तै हो जाते हैं उन्हें गवर्नमेण्ट तक जब स्वीकार करती है तब उसका महत्त्व सर्व साधारण क्यों न स्वीकार करेंगें ? उन्हें करना ही पड़ेगा । पर हां वे न्याय करनेवाले पञ्च सत्यका खून करनेवाले न हों ।

हमारी जातिमें पञ्चायतियोंकी विचित्र लीला है । जहां कहीं पञ्चायतीका हाल देखते हैं वहीं कुछ न कुछ पक्षपात, दुराग्रह स्वाभिमान और व्यक्तिगत द्वेषकी दुर्गन्ध फैली हुई दीख पड़ती है ।

कल्पना कीजिए कि किसीके हाथसे एक जीवका वध होगया, किसीने व्यभिचार किया, किसीपर भ्रूणहत्याका पाप सवार हुआ और किसीपर कोई दूसरी तरहका दोष लगा । ये सब अपराध हैं-पाप हैं-बुरे काम हैं । इनका शास्त्रोंमें प्रायश्चित्त बतलाया गया है । अथवा देश कालके अनुसार इनकी शुद्धिकी व्यवस्था पञ्चायतियां भी कर सकतीं हैं । पर वह मनमानी अथवा किसीके पक्षपातसे न होकर शास्त्रसे अविरुद्ध होनी चाहिए । इन अपराधोंके सम्बन्धमें किसी किसी देशमें तो यहांतक दण्डविधान किया जाता है कि यदि कोई एक वक्त जाति पतितकर दिया गया तो फिर वह सड़ सड़कर उसी अवस्थामें मर जायगा, पर उसे कभी जातिमें शामिल नहीं किया जायगा । यह अन्याय है-शास्त्र विरुद्ध है । भारीसे भारी पापका भी प्रायश्चित्त है । यदि ऐसा न होता तो कौन कह सकता कि मुसल्मानोंके शासनकालमें तलवारके जोरसे मुसल्मान बनाये गये हिन्दू लोग फिरसे हिन्दू कर लिये जाते । क्या जैनियोंके

लिए ऐसा समय न आया होगा ? अवश्य । शास्त्रकारोंने इन कष्टोंसे उद्धार पानेके लिए ही प्रायश्चित्त शास्त्रका विधान किया है । विना प्रायश्चितके जातियोंका निर्वाह ही नहीं हो सकता । महामुनि माघनन्दिके जीवन वृत्तान्तको कौन नहीं जानता कि वे कामान्ध होकर एक कुम्हारकी लड़कीसे फंस गये थे, पर जव उन्हें अपने कुलकी, अपने पदकी सुधि आई तव वे उसी समय अपने गुरुके पास गये और उन्होंने उनसे अपनी सव दशा कह सुनाई । गुरुने उन्हें प्रायश्चित्त देकर पवित्र किया । कहनेका मतलव यह कि बुरेसे बुरे पापका प्रायश्चित्त है । पापीसे पापी शुद्ध किया जा सकता है । हां यहांपर एक वात ध्यानमें रखने योग्य है, वह यह कि—इसका कोई यह मतलव न निकालले कि चलो जव पापका प्रायश्चित है तव फिर पाप करनेसे क्यों चूकना । ऐसे विश्वास करनेवालोंकी नितान्त गल्ती है । उन्हें समझना चाहिए कि प्रायश्चित्तसे और परिणामोंकी कोमलतासे वहुत सम्वन्ध है । प्रायश्चित्तका पात्र वही होता है जिसे अपने वुरे कामोंपर घृणा होकर जिसके परिणाम नितान्त कोमल होगये हों । पाप कर्मोंका प्रायश्चित्त होता है यह जानकर पाप करनेवालोंके लिए कुछ व्यवस्था है या नहीं, यह भगवान् जाने ।

दण्डविधानके सम्बन्धमें न तो इतनी सख्ती करना ही अच्छा है जो एक वक्त जातिसे पतित कर दिया गया उसे फिर जातिमें मिलाया ही न जाय और न इतनी उदारता ही अच्छी है जो वड़े वड़े गर्भपातादि महापाप हो जाय तव भी उसकी कुछ पूछताछ न की जाय—उसका कुछ प्रायश्चित्त न दिया जाय । ऐसी

घटनाएं कितनी देखीं और सुनी गईं हैं कि जब बेचारे किसी साधारण स्थितिवालेपर इस पापका बोझा आकर गिरता है तब तो वह आटेकी तरह पीस दिया जाता है और जब कोई श्रीमान् ऐसा घोरकर्म करता है तब उसे बचानेके लिए सब तैयार हो जाते हैं—उसका बाल भी बांका नहीं होने देते हैं। हम नहीं कहते कि यह बात सत्य होगी, पर यदि सत्य है तो इस अनर्थकी जातिको कुछ व्यवस्था अवश्य करनी चाहिए।

कुछ दिन हुए यहां एक सेठ साहब आये थे। वे कहांके रहनेवाले थे इसका ठीक निश्चय नहीं। वे घरसे यात्राके लिए गये थे। यात्रा किसलिए की गई? भ्रूणहत्याके लिए। आप जब यहां आये तब आपके साथ दो तीन विधवाएं भी थीं ऐसा सुननेमें आया है। आपने अपने इस कर्मके प्रायश्चित्तमें एक संस्थाको कुछ दान भी दिया है जिससे संभवत आपको निर्दोषताका सर्टिफिकेट प्राप्त होगया होगा और इसी सर्टिफिकेटके बलसे आप जातिमें वही उच्चपद धारण किये हुए होंगे। कैसा घोर अनर्थ! फिर भी हम कहलाते हैं अहिंसा धर्मके पक्षपाती?

यह सब अव्यवस्था, अन्याय—अनर्थ—हमारी पञ्चायतियोंकी ठीक हालत न होनेसे हो रहे हैं। उनका संगठन मनमाना है। पञ्चायतीमें किनका चुनाव होना चाहिए? इसपर किसीका लक्ष्य नहीं है। सब अपने अपने घरके पञ्च बन रहे हैं। जिन्हें अक्षरोंका ज्ञान नही, ईर्षा, द्वेष, पक्षपात जिनका नित्यका कर्मसा बन रहा है, वे हमारे न्याय करनेवाले पञ्च हैं। किसको कितना दण्ड देना चाहिए? किसका क्या अपराध है?

इसका कुछ विचार न कर जिसपर जैसा मनमें आया वैसा ही उसपर दण्ड कर दिया । जिसका बहुत अपराध है उसे थोडेहीमें वरी कर दिया और जिसका छोटासा अपराध है उसे घुनकी तरह अपनी पक्षपातकी चक्कीमें पीस डाला । जरूरत क्या जो हम यह विचार करें कि हमने बुरा किया या अच्छा? ऐसी हालतें दिन रात देखनेमें आती हैं, पर उनके सुधारका कुछ उपाय नहीं किया जाता ।

आजकल हमारी पञ्चायतियोंके कर्ता विधाता धनवान् रह गये हैं। उन्हींकी सब जगह दुहाई चलती है । चाहे वे हों निरे गोवरगणेश, पर पञ्चायतीका—न्यायकी अदालतके जजका—सेहरा उन्हींके सिरपर बांधा जाता है। वे पञ्चायती करते हैं या जातिकी मर्यादाका खून, इसपर कोई ध्यान नहीं देगा । कौन नहीं जानता कि इन धनवान् पञ्चोंकी अपारलीला है, इनकी शक्ति प्रचण्ड है । ये यहांतक अपनी शक्तिका विकाश कर सकते हैं कि प्राचीन जातिशृंखलाको अपने धनवलसे तोड़ मरोड़कर एक नवीन दलका संगठन कर डालते हैं। वह किस लिए? इसीलिए कि हमारा नाम जातिके सब लोगोंसे ऊपर रहे । उनके इस अनर्थसे चाहे जाति नष्ट हो जाय, चाहे परस्परके ऐसे विद्रोहसे आपसमें मरमिटनेकी नौवत आजाय और चाहे सारा संसार उन्हें धिक्कार देने लग जाय पर इसका उन्हें कुछ खयाल नहीं होगा । इन सब बातोंको एक कोनेमें रखकर वे करेंगे मनमानी ही । इस विषयमें हम कहांतक लिखें । जरा आप ध्यान देंगे आपको हमारी पञ्चातियोंकी हालत—'प्रसार्यमाणं शतधा शीर्यते'

जीर्णवस्त्रवत्' इस नीतिकी तरह जितनी जितनी लिखी जायगी उतनी उतनी ही वह अधिक दुर्गुणोंकी आकर जान पड़ेगी। इसलिए इस विषयको बहुत न लिखकर इन पञ्चायतियोंके सुधारकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करते हैं।

आपको यह तो इस लेखसे अच्छी तरह ज्ञात होगया कि इस समय हमारी जातिभरकी पञ्चातियोंकी दशा बहुत खराब है। अब हम यदि अपनी जातिकी उन्नति चाहते हैं तो हमे सबसे पहले अपनी पञ्चायतियोंके सुधारका प्रयत्न करना उचित है। हमें अब यह बात जातिके सामने उपस्थित करनी चाहिए कि पञ्चायतियोंका सुधार कैसे हो? कैसे उनके कार्यकर्त्ता हों? किस तरहके और कितने उन्हें अधिकार दिये जायं? इस विषयपर खूब आन्दोलन करना चाहिए। इसके लिए एक ऐसी नियमावली बननी चाहिए जो सब जगहकी पञ्चायतियोंके लिए उपयोगी हो और फिर उसके अनुसार कार्य होनेका प्रयत्न किया जाय। पञ्चायतियोंकी हालतका सुधार होनेपर हमारी सामाजिक, धार्मिक नैतिक और आर्थिक अवस्थाका बहुत जल्दी सुधार हो सकेगा और पञ्चायतियां भी उचित मार्गका अनुसरण करने लगेंगी। हम अपने विचारोंके अनुसार एक नियमावली उपस्थित कर प्रार्थना करते हैं कि जातिके शुभचिन्तक उसपर ध्यान पूर्वक विचार कर अपनी अपनी संमतिसे अनुग्रहीत करें। जिससे इस सिलसिलेको हम आगे बढ़ा सकें।

नियमावली यह है—

नियमावली-

खण्डेलवाल जैन पञ्चायती ।

(१) इस पञ्चायतीका नाम खण्डेलवालश्रावकजैनपञ्चायती होगा ।

(२) इसके उद्देश्य नीचे लिखे प्रकार होंगे—

(क) जातिसम्बन्धी समस्त व्यवस्थाका सुप्रबन्ध करना ।

(ख) जातिमें लौकिक और धार्मिक विद्याका प्रचार करना ।

(ग) जातिसम्बन्धी परस्परके झगड़ोंका मिटाना ।

(घ) पञ्चायतीके नियम विरुद्ध कारवाई करनेवालेको योग्य दण्ड देना ।

(ङ) गृहस्थ धर्मको लाञ्छित करनेवालोंको धर्मशास्त्रके अनुकूल विद्वान् पुरुषोंकी आज्ञानुसार दण्ड देना ।

(३) इस पञ्चायतीके सभासद खण्डेलवालजातिके बाल, वृद्ध, युवा, स्त्री और पुरुष सभी विना किसी फीसके समझे जायँगे।

(४) इसके सभासदोंके अधिकार नीचे लिखे माफिक होंगे—

(क) इस पञ्चायतीकी ओरसे निश्चित किए हुए नियमों-पर चलना और विपक्षमें दिये हुए दण्डका सब प्रकारके सभासदोंको सहन करना ।

(ख) पञ्चायतीकी बैठकमें शामिल होकर वही अपनी सम्मति दे सकेगा जो पुरुष होकर सोलह वर्षकी उमरसे ऊपर हो ।

(ग) उक्त पञ्चायतीके द्वारा पुरुष वर्गमेंसे चुने हुए

सभासद ही पञ्चायती सम्बन्धी कार्रवाईकी तथा पञ्चायती और उसके हस्तगत सब फण्डोंकी व्यवस्था अपनी पञ्चायतीके बहुमतसे करेंगे ।

(५) इस पञ्चायतीसे बहिष्कृत किये हुए सभासदको पञ्चायतीके किसी काममें किसी प्रकारकी सम्मति देनेका अधिकार न होगा ।

(६) इस पञ्चायतीके दो विभाग होंगे । एक तो—साधारणविभाग और दूसरा प्रबन्धकविभाग ।

(क) सर्वसाधारणविभाग उसे कहना चाहिए जिसमें पुरुषवर्गके सभासदोंके बहुमतसे समस्त कार्य किये जायँ ।

(ख) प्रबन्धकविभाग वह होगा जिसमें साधारण पञ्चायतीमेंसे चुने हुए सभासदोंकी सम्मतिसे कार्य किया जाय ।

(७) इस पञ्चायतीके निम्न लिखित कार्याध्यक्ष होंगे और वे दोनों विभागोंके कार्याध्यक्ष समझे जायँगे ।

सेठ— जो कि पञ्चायतीसे पास किए हुए सब कार्योंकी निगरानी रक्खे, पञ्चायतीसे पास किये हुए सब प्रस्तावोंका प्रचार करे और जो अनुचित कार्रवाई होती हो उसे चौधरीकी सम्मतिसे बन्द करे ।

चौधरी—जो कि सेठकी आज्ञानुसार निम्नलिखित काम करे और उसकी अनुपस्थितिमें उसका सब काम करे ।

(क) पञ्चायती सम्बन्धी सूचना पत्र निकालना ।

(ख) पञ्चायती द्वारा पास की हुई कुल कार्रवाईका एक बहीमें लिखना, बाहिरसे आई हुई चिट्ठियों और

दरख्वास्तोंका जवाब देना और जाति तथा धर्मकी उन्नतिके नवीन नवीन उपायोंको सोचकर उन्हें पञ्चायतीमें उपस्थित करना।

कोपाध्यक्ष—जो कि पञ्चायती सम्बन्धी और हस्तगत संस्था सम्बन्धी आमदनी और खर्चेका ठीक ठीक हिसाब रक्खे और प्रत्येक प्रकारके चन्देकी वसूली करे।

(९) पञ्चायतीके समस्त सभासदोंको, पञ्चायतीकी ओरसे सूचना मिल जानेपर पञ्चायतीमें अवश्य उपस्थित होना चाहिए। अगर कोई सभासद उपस्थित न हो सके तोभी एक तृतीयांश सभासदोंके उपस्थित होनेपर पञ्चायती सम्बन्धी कार्रवाई आरंभ करदी जाय और उनके द्वारा पास किये हुए प्रस्ताव सर्व पञ्चायतीके पास किये हुए ही समझे जाँय। अनुपस्थित सभासदोंको उसमें उजर करनेका कोई अधिकार न हो। उन एक तृतीयांश सभासदोंके किये हुए सब कार्य बहु सम्मतिसे पास हों और समान पक्ष होनेपर सेठकी अथवा उसकी अनुपस्थितिमें चौधरीकी दो राय समझी जाय।

(९) प्रबन्धकविभागके अधिकसे अधिक ग्यारा और कमसे कम सात सभासद नियत किये जायँ और पांचके उपस्थित होनेपर पञ्चायतीकी कार्रवाई आरंभ की जाय और बाकीके नियम ऊपर लिखे हुए नियमोंके अनुसार ही समझे जायँ।

(१०) इस पञ्चायतीके सभासदोंको, आम पञ्चायतीके बिना किसीको

बहिष्कृत करनेका अधिकार न होगा और बहिष्कृत किये हुएको पुनः सभासद बनानेका अधिकार भी आम पञ्चायतीके सिवा किसीको न होगा ।

(११) इस पञ्चायतीके कार्याध्यक्षोंका चुनाव प्रतिदर्श वर्षमें हुआ करेगा । यदि पूर्वके कार्यकर्त्ताओंने अपना काम अच्छी योग्यताके साथ किया हो तो पञ्चायतीको उचित है कि वह उन्हींको फिर भी कार्यकर्त्ता चुने । पञ्चायतीको यह भी अधिकार होगा कि यदि इस अवधिके बीचमें कोई कार्याध्यक्ष नियमविरुद्ध वर्ताव करे तो वह उसे अलग करदे और उसकी जगह दूसरे सुयोग्य कार्यकर्त्ताको नियत करदे ।

(१२) कहींकी स्थानिक पञ्चायतोंमें किसी कारणसे यदि दो विभाग हो जायँ तो उनके नेता अपने वैमनस्यके कारणोंको अपने प्रान्तकी पञ्चायतीके सामने उपस्थित करें और उस समय वह पञ्चायती जो कुछ फैसला करदे उसे दोनों विभागवाले बिना किसी उजरके स्वीकार करें ।

हमने अपने विचारोंके अनुसार उक्त नियमावली उपस्थित की है । इससे समाजको लाभ पहुंचेगा या नहीं ? इसमें कहां और कितना हीनाधिक करनेकी जरूरत है ? इत्यादि सब बातोंका विचार करनेके लिए हम अपनी जातिके सब भाइयोंसे और खासकर विद्वान्, श्रीमान् और जातिका हित चाहनेवालोंसे निवेदन करते हैं कि वे इस नियमावलीको खूब ध्यानपूर्वक मनन कर अपनी अपनी सम्मतिसे कृतार्थ करनेकी कृपा करें ।

खण्डेलवालमहासभामें क्या होना चाहिए ?

उक्त सभाके चार अधिवेशन हो चुके। यह पांचवां अधिवेशन है। पहलेके अधिवेशनोंमें प्रस्ताव तो खूब पास किये जा चुके हैं, पर सभाने उनकी अमली कार्रवाई अभीतक कुछ नहीं की। वे वैसे ही कागजोंमें लिखे हुए पड़े हैं। हमारी जातिकी जितनी संस्थाएं हैं वे प्रस्ताव तो खूब जोर शोरके साथ पास कर डालती हैं पर उनकी अमली कारवाईके लिए कोई उद्योग नहीं करतीं। यह क्यों किया जाता है ? क्या केवल प्रस्ताव पास करनेसे जातिको लाभ पहुंच सकेगा ? इससे तो यही अच्छा है कि वहुतसे प्रस्ताव पास न किये जाकर थोड़े ही प्रस्ताव पास किए जांय, पर उनकी खास कार्रवाई अवश्य की जाय। यदि खास प्रयत्न न करके केवल प्रस्तावोंके पास करनेपर ही हमारा लक्ष्य रहेगा तो हमें विश्वास नहीं कि हम कुछ जातिका सुधार कर सकेंगे। इसलिए हमारा प्रयत्न प्रस्तावोंके प्रचार करनेके लिए होना चाहिए।

खण्डेलवालसभाकी भी अभीतक तो यही हालत रही है। पर अव उसे इस और विशेष ध्यान देना उचित है। और और जातियोंकी अपेक्षा खण्डेलवालोंकी हालत विशेष सोचनीय हो रही है। इसलिए उसके सुधारका उपाय जल्दी करना चाहिए। इस विषयमें हम जितना ही प्रमाद करेंगे उतना ही उसका अधिक अनिष्ट होगा। आज हम भी इस पञ्चमाधिवेशनमें करने योग्य कुछ सूचनाएं सभाके सामने उपस्थित करते हैं और आशा करते हैं कि सभा इस ओर ध्यान देगी।

(१) हमारी जातिमें कुरीतियां बहुत प्रचलित हैं, उनके मिटाने-के लिए प्रस्ताव तो बहुत पास किये जा चुके पर उनकी अमली कार्रवाईके न होनेसे सभाको कुछ भी सफलता प्राप्त नहीं हुई। इसलिए उनकी अमली कार्रवाईके लिए सभाको खास प्रयत्न करना चाहिए। यह कुरीतियोंका घुन बडा जबरदस्त है। जातिकी जडको काटकर उसे सडा रहा है—खोखली कर रहा है। उसे नष्ट करना जरूरी है।

(१) देशभरमें प्रायः हर जगह खण्डेलवाल पञ्चायतियोंकी दशा बहुत खराब है। वे पक्षपात, हठाग्रह, ईर्षा, द्वेष, स्वार्थ आदि दोषोंसे अन्याय—अनर्थ—करनेसे नहीं हिचकती। इससे जातिकी बहुत हानि हो रही है। सभाको इस ओर विशेष ध्यान देकर उनके सुधारका उपाय करना चाहिए। इसके लिए सभाको देशभरके खण्डेलवालोंको अपनेमें शामिल करना चाहिए और फिर उनमेंसे अच्छे सुयोग्य पुरुषोंकी एक समिति बनाकर उसके द्वारा हरएक ग्रामकी पञ्चायतीका सुधार करना चाहिए।

(३) खण्डेलवालोंकी संख्या बहुत होनेपर भी उनमें कोई खास जातीय विद्यालय नहीं है। यही कारण है कि उनमें शिक्षाका प्रचार कुछ भी नहीं देखा जाता है। इसलिए सभाको एक खास अपने जातीय विद्यालयकी स्थापना करनी चाहिए और वह विद्यालय ऐसे स्थानमें हो जिसके द्वारा सब प्रान्तके खण्डेलवाल बालक लाभ उठा सकें।

(४) सभाको एक शिक्षाप्रचारकफण्डकी भी स्थापना करनी चाहिए जिसके द्वारा असमर्थ विद्यार्थियोंको छात्रवृत्तियां दी

जाया करें । हमारी जातिमें ऐसे गरीब विद्यार्थी वहुत मिलेंगे जो पढ़नेकी उत्कट इच्छा रखनेपर भी धनाभावके कारण पढते नहीं हैं और अपनी जिन्दगी दो दो चार चार रुपये मासिककी नौकरीमें बर्बाद करते हैं ।

(९) जातिमें एक अनाथविधवाश्रमकी बडी भारी आवश्यक्ता है। इस समय हमारी जातिमें वहुतसी ऐसी ऐसी अनाथ विधवाएं है जिन्हें दो वक्त खानेको भी नहीं मिलता है। वे बडी मुश्किलसे पीसना पीसकर अपना जीवन काट रहीं हैं । जातिके धनवानोंको इस ओर विशेष ध्यान देना उचित है।

(६) कई जातियोंमें यह रीति प्रचलित है कि यदि किसीके घरका कोई मर जाता है तो वे उसकी स्मृतिके लिए अथवा जातिमें ज्ञानप्रचारके लिए अपनी शक्तिके अनुसार धार्मिक अथवा और उपयोगी पुस्तकें वितीर्ण करते हैं । चूंकि हमारी जातिमें ज्ञानका प्रचार न होनेपर भी हमारे भाइयोंका इधर लक्ष्य नहीं है। इसके विपरीत वे नुकते आदिमें अपनी गुंजायशसे भी अधिक खर्च कर डालते हैं। इसलिए उचित है कि यह पद्धति हमारी जातिमें भी जारी करनेकी कोशिश की जाय। इससे सर्व साधारणको विना किसी श्रमके वहुत कुछ लाभ पहुंच सकेगा। हम नहीं कहते हैं कि वे अपने रीति रवाज एक साथ ही तोडकर उनमें कुछ खर्च न करें। पर उस भारी खर्चके साथ साथ कुछ इधर भी खर्च करना जरूरी है। जिससे जातिके लोगोंको ज्ञानका लाभ हो सके । सभा इसके लिए पूर्ण उद्योग करेगी ऐसी प्रार्थना है ।

इनके अतिरिक्त सभाके लिए काम तो और भी बहुत करना है,

पर वर्तमानमें इतने कामोंकी तो बडी भारी जरूरत है। इसलिए इनके करनेका भार तो सभाको उठना ही चाहिए। इस अधिवेशनमें सभाने यदि इतना भी काम किया तो हम कहेंगे कि उसने अपने लिए उन्नतिका मार्ग बहुत कुछ सीधा कर लिया है। हम फिर भी यह प्रार्थना करना अनुचित नहीं समझते हैं कि सभाको केवल प्रस्ताव ही पास करके निश्चिन्त नहीं हो जाना चाहिए। किन्तु उनकी अमली कार्रवाई करनेके लिए सब तरह कटिबद्ध होकर प्रयत्न करना चाहिए। इसपर ध्यान न देकर सभा चाहे कितने ही प्रस्ताव पास कर डाले पर उसे कुछ भी सफलता प्राप्त न होगी। यह हमारा दृढ़ विश्वास है।

प्रेममन्दिरकी स्थापना करो!

तुम्हारे पास धन है, उसे सफल करो। हम यह नहीं कहते कि तुम खर्च नहीं करते हो, करते हो, पर उन कार्योंमें जिनकी इस समय जरूरत नहीं है। इसीसे तुम उन्नतिके मार्गमें आगे न बढ़कर पीछे पीछे हटे जा रहे हो। तुमने बहुतसे मन्दिर बनवाये, यही नहीं किन्तु छोटेसे छोटे शहर और गांवतकको मन्दिरसे खाली नहीं रक्खा। उनमें जरूरत एक या अधिक मन्दिरकी होनेपर भी तुमने दो दो, चार चार, दश दश, बीस बीस, यहांतक कि सौ सौ, दो दो सौ मन्दिर खडेकर दिये। इसके लिए तुम्हारी इस उदारताका जितना गुणगान किया जाय उतना थोडा है। तुमने उनकी प्रतिष्ठाएं करवाईं। उनमें दश दश, बीस बीस, पचास पचास हजार, लाख, दो लाख, दश लाख और कहीं कहीं इससे भी अधिक रुपया

लगाया। इस विषयमें संसारकी सब जातियोंमें तुमने खूब नाम कमाया। यह जैनसमाजके लिए सौभाग्यकी वात है। पर अब जातिकी प्रतिष्ठा करनेकी जरूरत आ पडी है। क्या इस समय तुम अपनी अलौकिक उदारताका परिचय न दोगे? अपनेको संसारमें भाग्यशाली न बनाओगे? बनाओ, अवश्य बनाओ!! अचेतन मन्दिरोंकी अब हमारी जातिमें कमी नहीं, जहां देखो वहीं वे बहुत हैं। अब एक विशालमन्दिर, जिसमें कि संसारके जीव मात्र समा सकें, जिसमें बैठकर वे शान्ति लाभ करें, दूसरोंको शान्ति प्राप्त करानेका उद्योग करें, सबको सुखी करनेका प्रयत्न करें, सबके दुःखको अपना दुःख और सुखको अपना सुख समझें और अपने परायेका भेद भाव भूल जायँ, ऐसे चेतन मन्दिरके बनवानेकी जरूरत है। जरूरत ही नहीं, किन्तु उसके बिना बनायें हम सुख पूर्वक संसारमें रह ही नहीं सकते। बनवाओ, उस सुन्दर मन्दिरकी नीव जैनसमाजमें डालो। वह कौन मन्दिर? सुनो, प्रेममन्दिर। हमारी जातिमें प्रेममन्दिर कहीं भी नहीं है। इसलिए हम कौडीके तीन तीन हो रहे हैं। क्या तुम इस अपूर्व और विशाल मन्दिरको बनवाकर अपरिमित पुण्यकर्मका सम्पादन न करोगे? क्या अपने भीख मांगते हुए, दुखी भाई बहनों और माताओंके रहनेके लिए उस परम पावन स्थानकी स्थापना न करोगे? शिक्षाके लिए रोते फिरते जातिके प्यारे बालबच्चोंको विद्वान् और स्वार्थत्यागी बनानेके लिए उसमें प्रेमपाठशाला न खोलोगे? कन्याविक्रय, वृद्धविवाह आदिके द्वारा निरन्तर अशुभकर्मोंका बन्ध करनेवाले जातिबन्धुओंके भावोंमें दया और पवित्रता लानेके लिए उसमें स्थान न दोगे? व्यभिचार,

अन्याय, अनर्थ प्रभृति अधम कार्योंके द्वारा अनन्त गुण विराजमान आत्माको पवित्र करनेवालोंके लिए ऐसे शान्तिस्थानकी नींव न डालेंगे? डालो, अवश्य डालो! जैसे हो, सुखसे या दुःखसे, खर्चसे या बिना खर्चसे, उस पुण्यमय प्रेममन्दिरकी स्थापना करो, अवश्य करो! हां सुनो, उसमें मूर्ति चाहेगी, जो कि हमें आदर्शके गुण सिखा सके, जिसे देखकर हम अपने जीवनको दूसरोंके लिए समर्पण कर सकें—अपनी बलि दे सकें। बतलाओ, उसमें किसकी मूर्ति स्थापन करोगे? यदि तुम्हें याद न हो, तो लो मैं बतलाए देता हूं—तुम उसमें मूर्ति विराजमान करना। किसकी? जो जातिके लिए स्वार्थत्यागी हुआ है, घरबार, माता, पिता, स्त्री, पुत्र, पुत्री, धन सम्पत्ति आदि सभी जिसने छोड दिये हैं, जिसने कोमल शय्याका सोना छोडकर कंकरीली पृथ्वीपर सोना स्वीकार किया है, षट्रसमय और सुन्दर भोजनको छोडकर जिसने सूखा रूखा जैसा वक्तपर मिल गया उसे खानेमें अपना अहोभाग्य समझा है, जो शीतकालमें गरम गरम बिछोनेपर सोता और सुखनिद्राका आनन्द लेता, उसकी कुछ परवा न कर जो केवल परमार्थकी इच्छासे ऐसे भयानक समयमें वन वन जंगल जंगल भटकता फिरा है, जो अच्छे अच्छे बहुमूल्य वस्त्रालंकार पहरकर सदा सुखलाभ करता, उसके पास फटा टूटा वस्त्र अथवा कुछ भी न रहनेपर भी जिसने अपूर्व आनन्द माना है और जिसका सोते, जागते, खाते, पीते, चलते, फिरते वक्त भी यही एक ध्यान रहा है—यही एक पवित्र व्रत रहा है कि—

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥

अर्थात्—यह मेरा है, यह दूसरेका है, ऐसी संकीर्णता जिसके हृदयमें कभी उत्पन्न नहीं हुई है, जो सारे संसारको ही अपना कुटुम्व समझता था। उसीकी पवित्र प्रतिमा उस प्रेममन्दिरमें विराजमान करना—उसे ही अपना आदर्श वनाना। वह कौन? तुम्हारा प्यारा, तुम्हारी जातिका रत्न, सारे संसारसे प्रेम करने-वाला और प्रेमकी मूर्ति **निष्कलंक! प्यारा निष्कलंक!!** उसीकी मूर्ति बनवाकर उस प्रेम मन्दिरमें स्थापन करो—विराजमान करो। इससे बढ़कर तुम्हें ओर कोई आदर्श न मिलेगा। तुम्हारे धर्मकी गिरी अवस्था देखकर इसी महात्मानें—इसी वीर नररत्ननें—अपना सिर बौद्धोंके हाथ कटवाया था। क्या तुम अपने इस उपकारीका कुछ बदला न चुकाओगे? उसकी सुसन्तान कहलाकर उसके स्वर्गस्थित पवित्र आत्माको सन्तुष्ट न करोंगे? करो! जरूर करो!! इसीसे तुम अपनी गणना मनुष्य समाजमें करा कर अपना मुख उज्वल कर सकोगे। तुम्हें इस समय हजार काम छोडकर पहले अपने उपकारकका बदला चुकाना चाहिए।

क्या मेरी प्रार्थना सुनोगे? उसपर ध्यान दोगे? दो या न दो, अपना कर्तव्य करो या न करो। हमारा काम तुम्हें सचेत करनेका था उसे हमने पूरा किया। पर याद रक्खो यदि तुमने किसीके उपकारपर पानी फेरा है तो तुम्हें भी फिर कोई कौडीके भाव न पूछेगा। प्रकृतिका नियम है कि जो जैसा करता है उसका फल भी उसे वैसा ही मिलता है?

सज्जनो! चेतो, जल्दी चेतो! अपने आदर्श उपकारीकी स्मृतिके लिए पवित्र प्रेममान्दिरकी स्थापना करके गिरती हुई जातिको

सहारा दो—कष्टमय जीवनसे उसका उद्धार करो। यही मुसन्तानका कर्तव्य मार्ग है और:वह तुम्हारे लिए खुला हुआ पडा है।

सभाएँ क्यों स्थापित की जाती हैं?

हम अपने "हमारी पञ्चायतियां" नामक लेखमें यह बतला आये हैं कि पञ्चायती और सभा ये दोनों भिन्न नहीं है। क्योंकि दोनों सम्मिलित शक्तियां हैं। ऐसा होनेपर भी वर्तमान पद्धतिको देखकर हम यह कह सकते हैं कि पञ्चायतियोंका सम्बन्ध इस समय प्रायः जाति अथवा धार्मिक कार्योंसे ही समझा जाता है। यदि पञ्चायतियां चाहें तो सब कुछ कर सकतीं हैं, पर हम वर्तमानमें कहींकी पञ्चायतीको इस जमानेके माफिक समाजोन्नतिके कामोंमें अग्रसर नहीं देखते। तब हम किसी भिन्न उद्देश्यको लेकर पञ्चायती और सभाओंको यदि भिन्न भिन्न काम करनेवाली दो शक्तियां कहदें तो कुछ अनुचित नहीं होगा। एक और भी बात है—वह यह कि इस समय जितनी पञ्चायतियां हैं वे सब अपनेको पुराने लिबासमें ही रखना चाहतीं हैं। नवीन रीति उन्हें पसन्द नहीं है। हम नहीं कहते कि पुरानी पद्धति सर्वथा बुरी ही है और उससे कुछ लाभ नहीं होता। पर हां प्रगतिके अनुसार उनमें सुधारकी—एक नवीन शक्तिके लानेकी बहुत भारी जरूरत है। जिससे उनका प्रदेश संकुचित न रहकर उदार हो जाय। पञ्चायतियोंका किस तरह सुधार होना चाहिए इसका कुछ दिग्दर्शन हम अग्र लेखमें कर आये हैं।

आज हमें पञ्चायतियोंसे पृथक् सभाएं स्थापित इसीलिए करनी पडीं कि सभा एक नवीन युगकी प्रचण्डशक्ति है। इसके सहारेसे क्या धार्मिक, क्या सामाजिक और क्या देश सम्बन्धी आदि सभी

कार्य किये जा सकते हैं और सबमें अच्छी तरह सफलता प्राप्त हो सकती है । एक यह भी बात है कि लोको ह्यभिनवप्रियः अर्थात् पुरानी वस्तुसे उतना प्रेम नहीं होता जितना कि नवीनसे होता है । यह स्वाभाविक बात है और इसे प्रतिदिन हम अनुभव भी करते हैं । जहां कुछ जरा ही नवीन वस्तुके समाचार पाते हैं कि हमारी इच्छा उसके देखनेके लिए अधीर हो उठती है । यही बात पञ्चायती और सभामें चरितार्थ होती है । पुराने जमानेमें पञ्चायतियोंका प्रचार था तब लोगोंका उनपर प्रेम होता था । पर जबसे सभाओंकी नवीन पद्धति चली तब उनका यहांतक प्रभाव बढ़ा कि छोटे छोटे बालक भी उनपर मुग्ध होकर सभा समितियां स्थापित करने लग गये । उनका इस ओर इतना प्रेम उक्त कहावतको ठीक चरितार्थ करता है । यह बात है भी सच कि जो नवीन गतिके अनुसार कार्य करते हैं—जमानेको देखकर उसके अनुसार चलते हैं—उन्हें अपने प्रत्येक कार्यमें अच्छी सफलता प्राप्त होती है । सबसे पहले हमें यह विचार करना चाहिए कि हमारा उद्देश्य क्या है ? हम क्या चाहते हैं ? हमारी आशाएं किस ओर लग रहीं हैं ? उत्तरमें यह कहा जा सकता है कि हम चाहते हैं अपनी जाति तथा देशकी उन्नति । क्यों ? कहना पड़ेगा कि हमारी हालत अच्छी नहीं है । हममें शिक्षाका अभाव है, हम दरिद्री हैं, हमारे भाई दुखी हैं, उन्हें पूरा खानेको नहीं मिलता, वे अनाथ हैं, लूले हैं, लंगडे हैं अपाहिज हैं, उनके पास पैसा नहीं है, वे भीख मांगते हैं, घर घर भटकते फिरते हैं, एक अन्नके दानेके लिए त्राहि त्राहि करते

हैं, मूर्ख हैं—अशिक्षित हैं। पर तब भी उनकी कोई सम्हाल करनेवाला नहीं है—उनके दुःख सुखकी बात पूछनेवाला नहीं है। हां जब हमारा ही ठिकाना नहीं—हम ही पथ पथके भिखारी बन रहे हैं—तब उनकी कौन पूछेगा ?

खैर, इतनेपर भी कोई अपने दुःख सुखकी कुछ परवा न कर उनके उपकारके लिए कुछ प्रयत्न करने लगे तो उसे सफलता प्राप्त नहीं होती। कारण—उसे अपने भाइयोंके उपकारके लिए बड़ी खुशीके साथ सब कुछ दे देनेपर भी उसके कार्योंमें दूसरे लोग सहायता नहीं करते हैं। इसीलिए आखिर उसे विवश होकर अपने कार्यसे हाथ धोकर बैठ जाना ही पडता है। इसलिए जरूरत है कि ऐसे जाति या देशके सार्वजनिक कामोंमें हम सब मिल कर योगदें। क्योंकि इसे सब स्वीकार करेंगे कि जो काम सम्मिलित शक्तिके द्वारा किया जा सकेगा उसे एक शक्ति हर्गिज नहीं कर सकती। कौन नहीं जानता कि एक बडी रस्सी-का काम एक धागा नहीं दे सकता, मकानका काम अलग अलग ईंट चूनेसे नहीं निकल सकता, पुस्तकका काम उसके पृथक पृथक पत्रोंसे नहीं निकाला जा सकता, जलके भिन्न भिन्न परमाणु प्यास नहीं मिटा सकते। इन सब उदाहरणोंसे यह खूब ध्यानमें आ जाता है कि सम्मिलित शक्तिके द्वारा हमारी सब इच्छाएं बहुत जल्दी और अनायास सिद्ध हो सकतीं हैं।

हममें सम्मिलित शक्ति नहीं है और न हम यह चाहते ही हैं कि हम उसे प्राप्त करें जिससे हमारे इच्छित कार्य पूर्ण हो सकें। हमें और कुछ नहीं तो अपनी न्यायशील गवर्नमेण्टकी

जीती जागती शक्तिपर तो विचार करना चाहिए कि वह अपने विशाल साम्राज्यका किस तरह सञ्चालन कर रही है? हम कहेंगे कि यह उसी एक सम्मिलितशक्ति—पार्लियामेण्ट—सभा-समितिकी महासत्ताका काम है जो वह निष्कंटक अपने कामको चला रही है। यदि वह इस सम्मिलितशक्तिको—सभाको—पार्लियामेण्टको अपना आराध्य न बनाती तो कभी संभव नहीं था कि उसे इतना महत्त्व मिलता—वह कुछ काम कर लेती। इतने लिखनेका अभिप्राय यह कहा जा सकता है कि जिन जिन देशोंने, जिन जिन जातियोंने अपनी उन्नति की है वह सब इस सम्मिलित शक्ति—सभा—द्वारा की है।

हमारा ध्येय भी तो यही है—हम भी तो अपनी जातिकी उन्नति चाहते हैं--तब क्यों न अपनेमें इस शक्तिके प्राप्त करनेका उपाय करें? क्यों न प्रत्येक जैन धर्मके पालन करनेवाली जातियोंमें सभा समितियोंके स्थापनका उद्योग करें? हां इसमें एक बात और विचार करनेके योग्य हैं—वह यह कि हम सभाएं स्थापन करना अच्छा समझते हैं और बहुतसी छोटी छोटी सभाएं हमारी जातिमें स्थान स्थान पर हैं भी। यह हम नहीं कहते कि इन सभा समितियोंके द्वारा कुछ लाभ न पहुंचता होगा, परन्तु बहुतसी ऐसी सभाओंको, जो कि जातिमें भलाईके बदले बुराई पैदा कर रही हैं, देखकर बहुत खेद होता है। चाहते तो हैं जातिकी उन्नति और वह उल्टी गिरती हुई चली जाती है। ऐसी सभाओंकी हमें जरूरत नहीं है। हमें वे सभाएं स्थापित करनी चाहिएं जिनसे जातिमें ही नहीं किन्तु देशभरमें पवित्र प्रेमका प्रचार हो, एक्यताकी पवित्र ग्रन्थि सबमें बँधे, शिक्षाकी वृद्धि हो, मूर्खतासे पिण्ड छूटे, देश और जातिकी

आर्थिक अवस्थाका सुधार हो, वे दिनपर दिन सम्पत्तिशाली वनें, नैतिक-चरित पवित्र हो, जीवन धर्ममय हो, हृदय करुणाका स्थान वनें, स्वार्थकी वासना नष्ट हो, ईर्षा, द्वेष, पक्षपात, दुराग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभादिकका हृदयपर अधिकार न हो, दूसरोके गुणोंको हृदयमें स्थान मिले, बुद्धिका उपयोग अच्छे कामोंमें हो, परोपकार जीवनका एक खास कर्तव्य वने—आदि । जिन सभाओंमें यह शक्ति हो उन्हींकी हमें जरूरत है और उन्हींसे हमारा, हमारी जातिका और हमारे देशका कल्याण होगा ।

खण्डेलवालो ! उपर यह वात वतलाई गई कि सभाएं क्यों स्थापनकी जाती हैं? इससे यह अच्छी तरह आपके ध्यानमें आगया होगा कि सभाएं पवित्र उद्देश्यसे स्थापन की जातीं हैं । उनका कर्तव्य अपनी जातिकी उन्नति करना होता है । तो अव हमें यह समझानेकी जरूरत नहीं है कि खण्डेलवालपञ्चमहासभा की स्थापना भी आपकी पवित्र जातिमें शिक्षाप्रचारके लिए और उसकी सामाजिक धार्मिक नैतिक और आर्थिक अवस्थाका सुधार करनेके लिए हुई है । सभाकी स्थापना तो हो गई पर केवल स्थापनासे कुछ काम नहीं चल सकेगा । इसलिए आइए—हम आप सव उसमें योगदें और जातिका सुधार करें । तुम्हें यह अच्छी तरह याद रखना चाहिए कि सव जातियोंसे खराव हालत तुम्हारीं ही जातिकी हो रही है । इसलिए तुम्हें तो वहुत जल्दी सम्हल जाना चाहिए ।

गोदेगांव (नाशिक)में बैसाख सुदी ८—९—१० को तुम्हारी खण्डेलवालपञ्चमहासमाका पञ्चमवार्षिकाधिवेशन वडी धूम

धामके साथ होगा। उस समय सब जैनी भाइयोंको और खासकर खण्डेलवालोंको तो अवश्य ही आना उचित है। क्योंकि उनपर अपनी जातिके सुधारका भार जरूरी आ पड़ा है। हम आशा करते हैं कि खण्डेलवालजातिके अग्रगण्य श्रीमान्, विद्वान्, व्याख्याता और जातिहितैषी आदि—सभी सज्जन पधारनेकी कृपा करेंगे। उन्हें नीतिकारका यह वचन पूर्ण ध्यानमें रखना चाहिए कि—

परिवर्तिनि संसारे मृतः को वा न जायते।
स जातो येन जातेन याति जातिः समुन्नतिम्।

अर्थात्—इस संसारमें कौन नहीं मरा और कौन पैदा नहीं हुआ, पर वास्तवमें उसीका पैदा होना सफल है जिसने अपनी जातिको उन्नतिके शिखर पहुंचादी है।

स्वास्थ्य।

स्वास्थ्य किसे कहते हैं?—साधारणपने हम लोग रोगके न होनेको स्वास्थ्य कहते हैं। बहुतसे लोगोंका कहना है कि हमारे शरीरमें रोग तो किसी प्रकारका नहीं है परन्तु तब भी हम अपने मनको एक ओर बहुत देरतक नहीं लगा सकते। और बहुतोंका कहना है कि अभी तो रोग नहीं है परन्तु हां कुछ कुछ बढ़ता जाता है। ऐसे लोगोंको हम स्वस्थ नहीं कहते। गत वर्ष एक मनुष्यने आकर हमसे कहा था कि मुझमें दुर्बलता तो बहुत है परन्तु रोगका कुछ चिन्ह नहीं जान पड़ता। हमने भी उसकी बहुत परीक्षा की, पर उसमें रोगका कुछ चिन्ह नहीं दीख पड़ा।

इसके बाद उसके पेशाबकी परीक्षा करनेसे जान पड़ा कि उसे बहुमूत्र रोग हो रहा है। उसके पेशाबके सौ हिस्सोंमेंसे तीन हिस्सा शर्करा निकलती थी।

हमारा शरीर इंजिनके समान एक यंत्र विशेष है। इसके प्रत्येक अंश जब नियमित रूपसे अपना अपना कार्य करते रहते हैं तब शरीर नीरोग रहता है। इसी अवस्थाको वास्तवमें स्वास्थ्य कहते हैं। इञ्जिन जिस तरह कुछ स्वाभाविक नियमोंके आधीन है उसी तरह शरीर भी है। उनका कुछ भी जब उल्लंघन होता है तब ही शरीर अस्वस्थ हो जाता है। इञ्जिनके लिए जैसे कोयला और जलकी जरूरत पड़ती है वैसे ही शरीरके लिए उचित आहार और जलकी आवश्यकता है। इञ्जिनकी गति आदि जिस प्रकार ड्राइवरके ऊपर निर्भर है उसी तरह शरीरकी रक्षा भी बुद्धि, आचार और ज्ञानके ऊपर निर्भर है।

शरीरको सुरक्षित रखना सब चाहते हैं परन्तु वे अपने अज्ञानके कारण अपनी प्रवृत्तिको बुरे मार्गमें लगाकर रोगी हो जाते हैं। इसलिए स्वास्थ्यकी रक्षा करना सबके लिए उचित है। सबको निरन्तर अपने स्वास्थ्यपर विचार करते रहना चाहिए।

(१) स्वास्थ्य किसे कहते हैं ?—हमारे शरीर और मनका बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसलिए एकके अस्वस्थ होनेपर दूसरा भी अस्वस्थ हो जाता। स्वस्थ शरीरका मुख्य लक्षण मनकी प्रसन्नता है। जब शरीर नीरोग रहता है तब मन भी स्वभावसे प्रसन्न रहता है।

(२) शरीरकी गठन इस तरहकी होनी चाहिए जिससे

त्तम पुरुष गिने जा सकें । इसलिए शरीरका सुन्दर होना भी स्वास्थ्यका एक लक्षण है ।

(३) स्वस्थ शरीर न केवल देखनेमें ही सुन्दर होता है किन्तु बलवान् और कर्मवीर भी होता है । नीरोग शरीरमें जो सौन्दर्य्य होता है उसे देखकर सबका चित्त उसकी ओर आकर्षित हो जाता है । इसलिए यह कहना अनुचित न होगा कि नीरोगताकी चाह करना सबके लिए आवश्यक है और नीरोग रहनेहीसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्ति की जा सकती है ।

स्वाभाविक नियम—स्वास्थ्य कितने ही स्वाभाविक नियमोंके आधीन है । उनका जहां कुछ उल्लंघन हुआ कि शरीर उसी समय अस्वस्थ हो जाता है । हम माताके गर्भ और जन्मदिनसे लेकर मृत्यु पर्यन्त शारीरिक नियमोंके अनुसार चलें तब ही अपने स्वास्थ्यकी रक्षा कर सकते हैं । पहली अवस्थामें अर्थात् जन्मसे लेकर जबतक हममें ज्ञानका विकाश न हो तबतक हमारे शरीर रक्षाके नियमका पालन माता पिताके ऊपर निर्भर है । पर कई-वक्त उनके ठीक ठीक नियमोंका पालन न करनेके कारण हमें कष्ठ उठाना पड़ता है । यद्यपि इन नियमोंके सम्बन्धमें कहना तो बहुत कुछ है पर इस समय संक्षेपसे इनका उल्लेख किये देते हैं ।

(क) माताके गर्भमें वा जन्म लेतेवक्त पिता माताकी जैसी शारीरिक और मानसिक अवस्था होती है उसीका प्रतिबिम्ब पुत्रकी शारीरिक और मानसिक अवस्था पर पड़ता है । इसे सब जानते हैं कि रोगी माता पिताकी सन्तान कभी बलवान् और

नीरोग नहीं होती है। कितने रोग ऐसे होते हैं जो माता पितासे पुत्रमें उतर कर आते हैं। जैसे उपदंश, (गर्मी) यक्ष्मा, (क्षय) वात आदिक। यह तो हुई शारीरिक अवस्थाकी वात, मानासिक अवस्था भी ठीक इसी तरह देखी जाती है। क्रोधी तथा डरपोंक माता पिताकी सन्तान भी क्रोधी और डरपोंक होती है।

(ख) जहांतक सन्तान माताके गर्भमें रहती है उस समय तक उसके भविष्य स्वास्थ्य और मनकी अवस्था माताके स्वास्थ्य और मनकी अवस्थापर निर्भर रहती है। इसलिए गर्भाधानके समयमें स्त्रियोंका शरीर स्वस्थ रह सके और मन प्रसन्न और पवित्र रह सके ऐसा प्रयत्न करना चाहिए। क्योंकि गर्भावस्थामें नीरोग शरीर, प्रसन्न चित्त और पवित्र विचारवाली स्त्रियोंकी सन्तान भी सुन्दर, वलवान्, धर्मभीरु और विद्वान् होती है।

(ग) सन्तानपालनके समय माता पिताका स्वास्थ्य रक्षाके सम्वन्धमें अज्ञान होता है—असावधानी रहती है—उसका क्या फल होता है?—वह प्रतिदिन हम आंखोंसे देखते हैं। विशेष करके उस समय जव कि वहुत थोड़ी उमरकी स्त्रियां सन्तानवती होकर शिशुपालनरूप एक महान् कार्यका भार अपने ऊपर लेतीं हैं। पाठक, विचारें तो जो स्वयं अपने ही स्वास्थ्यकी रक्षा करना नहीं जानतीं हैं वे अपने वालक वालिकाओंकी क्या रक्षा कर सकेंगी? ऐसी अवस्थामें सन्तानकी जो सोचनीय दशा होती है उसका हम क्या हाल कहें? इसलिए उचित है—कर्तव्य है—कि वालिकाओंको विवाहके पहले स्वास्थ्य रक्षा और शिशुपालनकी कुछ कुछ शिक्षा दीजाय। सन्तान

पालनके समय माताको अपने स्वाथ्यकी रक्षापर विशेष ध्यान रखना चाहिए। कारण माताके अस्वस्थ रहनेसे उसका दूध बालक लिए अहितकर हो जाता है। शिशुपालनके समय किसी प्रकारका मादक द्रव्य (नशीली वस्तु भांग आदि), शरीरकी स्वस्थतामें हानि पहुंचानेवाला भोजन (अपक्कवा वासीभोजन) अथवा विषमिश्रित औषध आदि खानेको कभी नहीं देना चाहिए। स्वास्थ्य रक्षाके लिए जैसे कुछ साधारण नियम शिशुके लिए पालनीय हैं, उसी तरह माताको भी उनका पालन करना जरूरी है।

(घ) खाद्य—जिस तरह इञ्जिनके चलानेके लिए कोयला आवश्यक है उसी तरह शरीररक्षाके लिए खाद्य—भोजनकी आवश्यक्ता है। कोयला अग्निकी सहायतासे जैसे ताप उत्पन्न करके जलको वाष्प बना डालता है और उसी वाष्पसे फिर इञ्जिनमें एक प्रचण्ड शक्ति आजाती है। खाद्य भी उसी तरह शरीरमें अनेक तरहकी जटिल रासायनिक क्रियाओंके द्वारा दो रूपमें विभक्त होता है। उनमें जो अजीर्ण अंश रहता है वह तो मलके रूपमें परिणत होता है और जो जीर्णांश है वह खूनके साथ मिलता है और फिर शरीरके सब स्थानोंमें परिचालित होकर वह शरीरके गठन कार्यमें उपादान होता है। भूख वा भोजनासक्ति सब जीवोंमें होती है। इसका न होना हानिकारक है। कारण आहारके सिवा शरीर रक्षा नहीं हो सकती। पर अधिक आशक्ति बुरी है। आहारमें अधिक आसक्ति या लोभ ये दोनों एक ही बात है। लोभ मात्र ही सदोष है—बुरा है। हम जानते हैं कि सीमासे अधिक आहार करनेसे बहुत जल्दी बुरा फल होता है—उससे पेटमें गडबड कर देना है और इसका भावी

फल तो बहुत ही हानिकारक होता है। उससे बहुतसे रोग उत्पन्न हो जाते हैं। जैसे—अजीर्ण, उदरामय, मनकी अप्रसन्नता और अनिद्रा। आहारका सबसे साधारण नियम यह है कि उदरको तीन भाग आहारसे पूर्णकरके एक भाग वायुसञ्चालनके लिए खाली रख छोड़े।

(ङ) पीनेयोग्य—सब तरहके पीने योग्य पदार्थोंमें जल ही प्रधान और प्रकृति प्रदत्त है। हमारा शरीर दश भागमें नौ भाग जलसे पूर्ण है। इसीलिए शरीरका उपादान जल है। वह वाष्परूप होकर श्वासोच्छ्वासके साथ और त्वक्से पसीना होकर तथा शरीरसे प्रस्राव होकर प्रति दिन निकलता रहता है। इस तरह जलका शरीरसे निकलना और उसमें उसकी कमी होना इसका अनुभव तृषासे होता है। हमें तृषा तब लगती है जब शरीरमें जलकी कमी होती है। इसलिए तृषा दूर करनेके लिए जलका पीना उचित है। परन्तु पीनेका जल निर्मल और शुद्ध होना चाहिए। कारण पवित्र जलके न पीनेसे अनेक तरहके रोग पैदा होते हैं।

(च) वायु—पृथ्वी वायुसे वेष्टित है। मछली आदि जलजन्तु जैसे जलमें डूबे रहते हैं, उसी तरह हम भी वायुमें डूबे हुए हैं। जल रहित जगहमें जैसे मछली जी नहीं सकती ठीक वैसे ही हम वायुरहित जगहमें कभी नहीं जी सकते। इसी वायुका व्यवहार हम प्रतिदिन श्वासोच्छ्वासके रूपमें करते हैं। वायुका एक उपादान आक्सिजन—(Oxcation) वाष्प है। यही आक्सिजन श्वासके साथ साथ फुस्फुस या फेफड़ेमें आकर और खूनके साथ मिलकर सारे शरीरमें बहता है। फिर रक्तसे कार्बोनिक एसिड (हिंसकवायु carbonic)

बाष्प आदि सब दूषित पदार्थ श्वासवायुके साथ शरीरसे निकलते हैं। इसी तरहसे वायु रक्तको शुद्ध करता है । वायुके दूषित होनेसे रक्त दूषित होता है और फिर उससे बहुतसे रोग उत्पन्न हो जाते हैं । इसलिए स्वास्थ्य रक्षाके लिए शुद्ध वायुका सेवन करना जरूरी है।

(छ) **व्यायाम वा शारीरिक परिश्रम**--अङ्ग और प्रत्यङ्गका संचालन जरूरी है। क्योंकि उनका सञ्चलन न होनेसे वे पुष्ट नहीं होते हैं और उनके पुष्ट न होनेसे फिर वे अपना अपना कार्य भी ठीक रीतिसे नहीं करते। इसका परिणाम यह होता है कि धीरे धीरे फिर स्वास्थ्य खराब हो जाता है। व्यायाम या शारीरिक परिश्रम करना जरूर चाहिए, पर अपनी शक्तिके अनुसार। शक्तिसे अधिक परिश्रमका या व्यायामका फल भी स्वास्थ्यको हानिकारक है। शारीरिक परिश्रम, अँताड़ियोंको, मूत्राशयको और त्वचाको मैल दूर करनेके लिए उत्तेजित करता है और उन्हें नीरोग और शक्तिशाली बनाता है। अर्थात् परिश्रमसे पसीना आता है और उससे उक्त अवयवोंका मैल दूर होता है तथा उक्त अवयव बलवान् बनते हैं। शारीरिक परिश्रमके द्वारा पाकस्थान, खूनके सञ्चालनका यंत्र और फेंफड़ा उत्तेजित होता है, उससे भूख बढ़ती है शरीर पुष्ट होता है, सब अंग और प्रत्यंग पूर्ण होते हैं और कष्ट सहनेकी शक्ति बढ़ती है । व्यायाम उस तरह करना उचित है जिससे अंग प्रत्यंगका समुचित सञ्चलन हो और जिस व्यायामसे एक ही अंगमें क्रिया हो और दूसरेमें एक बार भी न हो तो वह शरीरके लिए सुखकर नहीं होता । व्यायामका परिणाम सबके लिए समान नहीं

है, किन्तु इसका निश्चय अपने शरीरकी अवस्था परसे करना चाहिए। साधारण परिमाण यह समझना चाहिए कि जब कष्ट जान पड़ने लगे तब व्यायाम करना छोड़ देना उचित है।

(ज) विश्राम वा निद्रा—स्वास्थ्यके लिए जैसे परिश्रमकी जरूरत है वैसे ही विश्रामकी भी जरूरत है। निद्रा ही विश्रामका उत्तम और स्वाभाविक उपाय है। हम दिनमें काम करते हैं उससे हमारे शरीरमें जो क्षय होती है उसकी पूर्णता रात्रिमें नींद लेनेसे होती है। शरीरके लिए जैसे विश्रामकी आवश्यकता है उसी तरह मनके लिए भी है। मानसिक वृत्तिको निरन्तर चलते रहनेसे देह और मन दोनों ही शिथिल और शून्य हो जाते हैं। स्वास्थ्यके उक्त नियमोंको सदा ध्यानमें रखना उचित है। ये प्राकृतिक—स्वाभाविक—हैं। प्रकृतिके विरुद्ध कार्य करनेसे दुःख उठाना पडता है। *

सम्पादकीय विचार।

१ जैनहितैषीके एक जैनी

गतांकमें हमने क्षुल्लक मुन्नालालजीके बाबत नोट किया था। यह कहा जा सकता है कि उसमें कुछ कड़े शब्द थे जरूर, पर उसका विषय महाराजके ध्यान देने लायक था। महाराजको लिखा गया था कि आप अपनी प्रवृति शास्त्रके अनुसार कीजिए। विचार करनेपर यह लिखना कुछ अनुचित भी नहीं है। कारण जब बड़े बड़े, सो भी साधु कहलानेवाले ही जब शास्त्रके विरुद्ध चलते हैं तब उनके

---

* बङ्गलाके स्वास्थ्य समाचारसे अनुवादित।

उपदेशका असर और लोगोंपर कैसे पड़ सकता है ? इसपर कुछ विचार न कर हमारे हितैषीके एक जैनी महाशयने जो सत्यवादीको लक्ष्य करके यह लिखा है कि अब बेचारे मुन्नालालजीके अच्छे दिन नहीं है....सत्यवादीके सम्पादक महाशयको केवल मुन्नालालजी पर ही इस तरह न लिखना चाहिए था....आदि । पाठक, लेखक महाशयका अभिप्राय समझे न ? उनका कहना है कि आपने केवल मुन्नालालजीके लिए ही क्यों लिखा और और त्यागियोंकी जो शास्त्र विरुद्ध प्रवृति है उसपर भी तो कुछ आपको लिखना चाहिए । इसके लिए आपने ऐलक पन्नालालजीके केश-लोंचके समय बहुतसे लोगोंको एकत्रित होना ठीक नहीं बतलाया है और इसका सब दोष ऐलकजीपर रक्खा है कि वे लोगोंको क्यों एकत्रित करते हैं ? एकान्त जगहमें कहीं बैठकर केशलोंच क्यों न कर लिया करें ?

लेखक महाशयका इस लिखनेसे यह अभिप्राय निकलता है कि चाहे किसीकी पद्धति शास्त्रानुकूल भले ही हो, चाहे वह निर्दोष हो पर जब एकके ऊपर कटाक्ष किया जाता है तब दूसरे पर करना ही चाहिए । पर यह उनकी गलती है । उन्हें बतलाना चाहिए कि ऐल-कजीमें क्या दोष है । कौनसी उनकी प्रवृति शास्त्रविरुद्ध है ? जिसके लिए आप हमसे उनके बाबत लिखवाना चाहते हैं । हम यह उचित नहीं समझते कि झूठ मूठ ही उन्हें लाञ्छित करें । रही यह बात कि वे लोगोंको क्यों एकत्रित करवाते हैं ? पर यह भी लेखकका भ्रम है । ऐलकजी महाराज यह कभी किसीसे नहीं कहते

कि हम तब केशलोंच करेंगे जब दश पांच हजार वा थोड़े बहुत लोग इकट्ठे होंगे। किन्तु उल्टा इस समारोहको देखकर नाराज होते हैं। यह दोष ऐल्कजीपर लगाना ठीक नहीं। आप, श्रावकोंको इस बातके लिए बाध्य करिये कि वे कुछ भी समारोह महाराजके लोंचके समय न किया करें। करते हैं कौन और दोष किसे दिया जाता है? यह उचित नहीं। इसपर भी आपकी समझमें न आवे तो आप ऐल्कजीके उन दोषोंकी सूची प्रकाशित कीजिए जिन्हें आप बुरा समझते हैं यदि वे सत्य और निष्पक्षतासे बतलाये हुए होंगे तो हम जरूर उसपर अपनी समझके अनुसार लिखेंगे। पर इस तरह लिखनेको कि एकके दोषोंकी आलोचना करनेपर दूसरेमें भी दोष निकालना ही चाहिए, हम बाध्य नहीं हैं।

२ शारीरिक और मानसिक बल।

शारीरिक बलके साथ मानसिक बलका बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। एकके बलवान् होनेपर ही दूसरा बलवान् हो सकता है। जिनमें शारीरिक बल नहीं वे अपने निर्बल मानसिक बलसे कोई महत्त्वका काम नहीं ले सकते। इसलिए पहले शारीरिक बलका होना हममें बहुत जरूरी है। जैसे जैसे हमारा शरीर बलवान् होता जायगा वैसे वैसे ही मानसिक बल भी बढ़ता जायगा और उनके द्वारा हम कठिनसे कठिन काम करनेके लिए समर्थ हो सकेंगे। हमें आवश्यक है कि हम अपने शारीरिक बलके बढ़ानेकी कोशिश करें। हमारी जाति जैसे और और विषयोंमे संसारकी सब जातियोंसे पीछी पड़ी हुई है वैसे ही शारीरिक बलमें भी वह सबसे

पीछे है। और शारीरिक बलके न होनेसे ही आज साढ़े बारह लाख जैनियोंकी संख्यामें शायद ही प्रचण्ड मानसिक बलके धारक दीख पड़ेंगे। यदि ऐसे दोचार वीर पुरुष भी सारी जातिमें होते तो क्या आज जातिकी यह हालत होती? वह बात बातके लिए इन कायर जैनियोंका मुँह ताकती? कभी नहीं। जिस जातिके वीर पुत्र समन्तभद्र, अकलंक, सरीखें ने अपने समयमें अकेले होनेपर भी सारे संसारको हिला दिया था, जातिको उन्नतिके शिखरपर पहुँचा दी थी, तब यदि इसवक्त कुछ भी वीर पुरुष होते तो क्या वे इसे नहीं उठाते? अवश्य। पर हो कहांसे न तो हममें शारीरिक बल है और न मानसिक, तब क्यों न हम गिरेंगे? निस्सन्देह गिरेंगे ही। खैर, जो कुछ हुआ अब भी हमें अपने पैरोंके बल उठना चाहिए, जिससे हम भी किसी गिनतीमें गिननें लायक हो सकें। हमारी जाति बहुत दुर्बल जाति है। उसमें न शारीरिक बल है और न मानसिक। इसलिए हमारा कर्तव्य है हम उसमें दोनों प्रकारके बल बढ़ानेकी कोशिश करें। इस संबधमें हमारा प्रयत्न सफल होगा इसका सन्देह जरूर है। पर तब भी कुछ न कुछ उपाय अवश्य करेंगे। हमने अपने विज्ञ पाठकोंके अनुरोधसे यह प्रबन्ध कियाँ है कि आगेसे कुछ स्वास्थ्य सम्बन्धी लेखोंको भी हम अपने पत्रमें प्रकाशित किया करें। इस अंकमें भी स्वास्थ्य नामक लेख दिया गया है। यदि इसे पाठक पसन्द करेंगे, हमारे इस प्रयत्नमें सहानुभूति दिखलावेंगे तो आगेसे बराबर एक लेख इस विषयपर रहा करेगा।

पुस्तक-समालोचन।

प्रतिभा—श्रीयुत अविनाशचन्द्रदास एम्. ए. एल. बी के बंगला लिखित कुमारी उपन्यासका हिन्दी अनुवाद। अनुवादक श्रीयुत नाथूरामजी प्रेमी। प्रकाशक हिन्दीग्रन्थरत्नाकर कार्यालय। मूल्य सवा रुपया। मिलनेका पता—हीराबाग बम्बई नं ४

हिन्दीमें बहुतसे उपन्यास मुद्रित हो चुके हैं। उनमें काशीके उपन्यासोंने तो तिलिस्म और ऐयारीका चित्र खींचनेमें कमाल क दिया है। आप बड़ेसे बड़े ऐसे उपन्यासोंको पढ़िये आपको दो बातोंके सिवा उनमें कुछ महत्त्वकी बातें या शिक्षा प्राप्त की जानेकी प्रणाली शायद ही मिलेगी। तब मिलेगा क्या? यही दो बातें—कहीं तो उपन्यासोंके चरित्र नायकको तहखानेमें सड़ाना और कहीं उसे निकाल कर उसकी प्यारीको कैद खानेमें फँसाना। बस, यही उनका मूल तत्त्व है—उनके महापुराणोंकी रचनाभित्ति है। हम नहीं कह सक्ते कि ऐसे उपन्यासोंसे देश या समाजका कुछ कल्याण होगा?

हिन्दीजगत्में अभी उपन्यासोंकी जरूरत अवश्य है, पर ऐसोंकी नहीं, जिनसे पढनेवालोंका चरित्र बिगड़े। प्रतिमा इस विषयसे निर्मुक्त होकर सच्ची प्रतिभा है। यह एक ऊंचे दरजेका उपन्यास है। मनुष्यके स्वाभाविक होनेवाले बुरे या अच्छे भावोंका इसमें बड़ी सुन्दरतासे उल्लेख किया गया है। प्रकृतिके वर्णनका चित्र भी बहुत उत्तम रीतिसे खींचा गया है। उसपर विचार करनेसे बहुत कुछ शिक्षा मिलती है। पढ़नेसे हृदयमें उदारता, शांति आदि पवित्र गुणोंका

विकारा होता है । हिन्दीसाहित्यमें ऐसे उपन्यास उँगुलियोंपर गिनने लायक ही मिलेंगे । अनुवादक महाशयने इसे हिन्दीमें लिखकर हिन्दीकी शोभा बढ़ादी है । अनुवाद सुन्दर हुआ है । छपाई वगैरह भी सुन्दर है ।

हिन्दीचित्रमयजगत्—चित्रशालाप्रेस पूनासे निकलनेवाला मासिक पत्र । सम्पादक श्रीयुक्त लक्ष्मीधर वाजपेयी । वार्षिक मूल्य साधारण कागजपर छपनेवालेका सवा तीन रुपया और बढ़ियापर छपने वालेके साढ़े पांच रुपया ।

यह जनवरीका खास अङ्क है । इसमें सब मिलाकर अठारह लेख हैं । यद्यपि लेख सब ही पठनीय हैं तब भी चित्तशुद्धि, मि० थियोडोर रूजवेल्टका जीवन चरित, और बालकनयुद्ध, ये लेख विशेष कर चित्तको आकर्षित करते हैं । कविताएं सभी उत्तम हुई हैं । उनमें दमयन्तीका विलाप चित्तपर बहुत असर डालता है और बार बार पढ़नेके लिए उत्कण्ठित करता है । हमने उक्त कविताको कईबक पढी तब भी चित्त उसी ओर जाता है और पढ़नेसे सन्तोष नहीं होता । इस अङ्कमें चित्रोंकी संख्या सब मिलाकर पैंतालीस है । उनमें दो चित्र रंगीन हैं । इसमें सन्देह नहीं कि इस अंकका सम्पादन बहुत अच्छा हुआ है । हिन्दीका सौभाग्य है जो उसमें अच्छे अच्छे लेखक दीख पडने लगे हैं ।

समाचार सार ।

केशलोच या लीला—हमें समाचार मिला है कि त्यागी मुन्नालालजीने आधा केशलोच तो कोटामें कर डाला है और अवशिष्ट हरदामें

करेंगे। हमें विश्वास नहीं कि यह बात सत्य हो। क्योंकि क्षुल्लकजी महाराज आखिर कुछ न कुछ तो अपने हानि लाभ या निन्दा अपवाद का खयाल रखते होंगे। उन्होंने जिस पदको स्वीकार किया है, जहांतक विश्वास है उसे अपने आत्मकल्याणके लिए ही किया है। क्या महाराज स्वयं इस बातपर विचार न करेंगे कि हमें वह कार्य करना चाहिये जिससे जैनधर्मकी हँसी न हो। हम जहांतक समझते हैं- ऐसा खयाल तो साधारणसे साधारण जैनीका भी जब रहता है तब एक ऊंचे पदके धारकका उसपर ध्यान कैसे न होगा? पर सहसा सम्वाददाताके हालको, जिसने कि अपनी आँखोंसे यह लीला देखी है कैसे असत्य कहदें। सम्वाददाता कोई महाराजका दुश्मन तो है ही नहीं जो वह ऐसी असत्य कल्पना करके उन्हें बदनाम करे। सम्वाददाताने यह भी लिखा है कि महाराजने अपने आवेशोंचका कारण कोटामें थोड़े जनसमुदायका एकत्रित होना बताया था। जो हो, महाराज बड़े आदमी हैं—ऊँचे पदपर प्रतिष्ठित हैं वे जो कुछ अभिनय-लीला-बतलावें वह थोड़ी है। पर हंसी तो जैनसमाजकी अन्धभक्तिपर आती है कि जो इस प्रकार शास्त्रमर्यादाका अनादर और जैनधर्मकी अन्य लोगोंके द्वारा हंसी होनेपर भी उसे वह अपना सौभाग्य समझता है। अस्तु। इस विषयपर विशेष टीका टिप्पणी करना अपनी जाँघ उघारिये आपहि मरिये लाज की उक्तिको चरितार्थ करना है। इसलिए हम इस विषयको विशेष महत्त्व न देकर क्षुल्लकजी महाराजका ही ध्यान इस ओर आकर्षित करते हैं और प्रार्थना करते हैं कि वे ऋषियोंकी आज्ञापर कुछ विचार करें और देखें कि उनमें कुछ तथ्य है या नहीं?

सभाकी स्थापना—लश्करमें जैननवयुवक नामकी एक सभा स्थापित की गई है। उद्देश्य—जैनधर्मकी उन्नति और स्वाध्यायका प्रचार करना है। मंत्री श्रीयुत गोपीलालजी गोधा और उपमंत्री फूलचन्दजी शाह चुने गये हैं। दोनों साहब उत्साही युवक हैं।

वेदी प्रतिष्ठोत्सव—इन्दौरमें रामासाके मन्दिरमें श्रीयुत ठाकुर-लालजी मूलचन्दजीने नवीन वेदी तैयार करवाई है। उसकी प्रतिष्ठा बैसाख सुदी १ से होनेवाली है। भाइयोंको पधारकर पुण्यसंग्रह करना चाहिए।

एक नये ऐलक—पौंडसिरस निवासी क्षुल्लक चन्द्रसागरजीने हालहीमें ऐलक पदकी दीक्षा स्वीकार की है। आपका अभी परंडामें केशलोंच हुआ है। आप पहले अच्छे गृहस्थ थे। चार लड़के और चार लडकियां तथा स्त्री अब भी मौजूद हैं। आपकी अवस्था इस समय ५४ वर्षकी है। सच्चा वैराग्य इसीको कहते हैं जो सब तरहकी सुख सामग्रीके होनेपर भी उससे विरक्ति हो जाय।

वार्षिक अधिवेशन—सोनागिर सिद्धक्षेत्रपर चैत्र वदी १ से ५ तक मेला था। इसी अवसर जैनसिद्धान्तपाठशालामोरेनाका वार्षिक अधिवेशन किया गया था। अधिवेशन बड़े आनन्दके साथ समाप्त हुआ। न्यायवाचस्पति पं. गोपालदासजी, कुँवर दिग्विजय-सिंहजी, बाबू दयाचन्दजी बी. ए., बाबू जुगलकिशोरजी और बाबू ज्योतीप्रसादजी आदि जातिके हितैषियोंके सम्मिलित हो जानेसे उत्सवकी शोभा दर्शनीय हो गई थी। व्याख्यान, शास्त्रसभा, ज्ञानचर्चा आदिकी बहुत चहल पहल रही। पाठशालाके लिए

अपील की गई थी पर खेद है कि बहुत थोड़े भाइयोंने उसपर ध्यान दिया।

पचासलाखका दान—बम्बईके एक पारसी सज्जन पचासलाख रुपया दान देनेवाले हैं। यह दान किस काममें दिया जायगा यह अभी प्रगट नहीं हुआ है और न देनेवाले सज्जनने ही अपना नाम प्रकाशित किया है। पर बहुत जल्दी यह बात प्रकाशमें आवेगी। जैनियो! तुम्हें दान करनेको तो सिवाय मन्दिर बनवाने वा प्रतिष्ठा करवानेके कोई जगह ही नहीं है?

पाठशालाका निरीक्षण—ग्वालियर रियासतके तवरघार जिलेके सूबा साहब श्रीयुत त्रिंबकराव चिन्तामणि केलकरने ता. ३-४-१२ को जैनसिद्धान्तपाठशाला मोरेनाका निरीक्षण किया था। उसपर सन्तोष प्रगट करते हुए जो आपने पाठशालाके सम्बन्धमें अपनी उदारता दिखलाई है उसका सार यह है—

जैनसिद्धान्तपाठशाला और उसके आधीन पुस्तकालयके देखनेका मुझे सौभाग्य मिला। देखकर मुझे बहुत सन्तोष हुआ। पाठशालाका अन्तिम ध्येय जैनसिद्धान्तकी उच्च शिक्षाके देनेका है। वह अच्छा है। इसके प्रधान सञ्चालक श्रीयुत विद्वद्रत्न पं. गोपालदासजी हैं। आप इसे तनमन धनसे चलाते हैं—उसकी उन्नतिके लिए अविश्रान्त श्रम करते हैं। जैन समाजको अपना सौभा समझना चाहिए जो उसमें ऐसे उदारधी और विद्वान् पुरुष मौजूद हैं। जैन समाज प्रायः व्यापारियोंका समाज है। इसलिए उसे उचित है कि वह अपनी सर्वोत्तम संस्थाको चिरस्थायी बनादे। मैंने पाठशालाके शिक्षाक्रमको भी ध्यानसे देखा और विद्यार्थियोंसे कुछ पूछा

थी. मुझे उनके उत्तरसे सन्तोष हुआ । पाठशालाके रजिष्टर वगैरह भी देखे सब ठीक मिले । मैं कुछ पाठशालाके सम्बन्धमें निवेदन करता हूं—

(१)लडकोंकी तन्दुरुस्ती, सोबत, चालचलन, व्यायाम, खानपान और बीमारी आदिकी निगरानी रखनेके लिए किसी खास आदमीको नियुक्त करना चाहिए । इसके अतिरक्त विद्यार्थियोंके प्रतिदिनके चालचलन और नित्यकर्मके नोट करनेकी डायरी रक्खी जावे ।

(२)पारमार्थिक शिक्षाके साथ लौकिक शिक्षा देना भी उचित है क्योंकि विद्यार्थियोंकी सारी उमर संसारयात्रामें ही बीतेगी ।

(३) पाठशाला छोड़ने पर विद्यार्थी किस व्यवसायके द्वारा जीवन निर्वाह करेगा और उसकी स्थिति कैसी है ? जहांतक हो ये बातें पहले ही जान लेनी चाहिएं ।

(४) वर्तमान मकान पाठशालाके लिए उपयुक्त नहीं है ।

(क) पाठशालाकी प्रसिद्धि उपदेशकादिकोंके द्वारा करवानी चाहिए और फण्ड एकत्रित करनेके लिए भी प्रयत्न करना चाहिए। मैं भी जैनबंधुओंसे प्रार्थना करता हूं कि वे इसे पूर्ण सहायता दें । जिससे संस्कृत भाषा और जैनधर्मको लाभ पहुंचे ।

तीसहजार—हैद्राबादमें स्थानकवासी भाइयोंकी कोन्फरन्स हुई थी । उसमें तीस हजारका फण्ड एकट्ठा हुआ है । यह शिक्षा आदिके काममें लगाया जायगा । दिगम्बरियो ! अपने भाइयोंसे कुछ तो शिक्षा ग्रहण करो । शिक्षा न तो ईर्षा ही सही। पर किसी तरह कुछ करो तो !

याद रखनेकी बातें।

१. कृपा करके याद रक्खो कि हम सब स्त्री पुरुष एक ही नौकामें हैं। हरएक दयाका काम जो हम करते हैं और हरएक दयाका वचन जो हम बोलते हैं उससे न केवल दूसरोंको ही आनंद होता है, किन्तु हमको भी आनन्द होता है।

२. हमको सब प्राणधारियोंके लिए बेजबान जानवरों और प्यारे भाइयोंके लिए दया करना सीखना चाहिए।

३. जानवर मनुष्योंके हर काममें सहायक हैं, हम उनके साथ बुरा व्यवहार न होने दें। उनके खानेके लिए भोजन, पीनेके लिए पानी और रहनेके लिये साफ सुथरा आरामका मकान दें। वे मीठी बातें और प्रेम पसंद करते हैं। उनको तकलीफ वैसी ही होती है जैसी हमको। न कभी उनपर जियादह बोझ लादो और न कभी उनसे जियादह काम लो।

४. हरएक प्राणीको आदरकी दृष्टिसे देखो और उनको बेजान चीज खयाल न करो जैसा कि उनका हमपर कोई अधिकार ही नहीं है, किन्तु जानदार समझकर उनके साथ भलाईसे बर्ताव करो।

५. जो पुरुष दयावान् नहीं है वह निर्दयी है, निर्दयी हृदय पापकी खानि है।

६. कभी किसी प्राणधारीको व्यर्थ तकलीफ देनेकी कोशिश मत करो।

७. जब तुम किसीके साथ बुरा बर्ताव देखो तो सच्चे दिलसे बुरे बर्तावको दूर करनेकी कोशिश करो।

८ हरएक प्राणीके साथ ऐसा बर्ताव करो जैसा तुम अपने लिए पसन्द करते हो अगर तुम वही प्राणधारी हो ।

९. जहां तक हो सके दूसरोंको खुश करनेकी कोशिश करो ।

१०. कभी बुरी गाली जबानपर मत लाओ और सादेपन व परहेजसे जीवन बिताओ ।

सर्वप्रिय और आनन्दित रहनेके ये ही उपाय हैं ।

दयाचन्द्र जैन बी. ए.,
ललितपुर.

सस्ते और सुन्दर भावोंके चित्र ।

जयपुरकी चित्रकारी की प्रशंसा करना व्यर्थ है । उसकी देश देशान्तरोंमें प्रसिद्धिही इस बातका प्रमाण है कि वह कितनी मनो-मोहिनी होती है । हमारे भाई मंदिरोंके लिए हजारों रुपयोंके चित्र मंगवाते हैं पर उन्हें बहुत कुछ हानि उठानी पड़ती है । इस लिए हमने वर्द्धमानजैनविद्यालयमें इसका प्रबन्ध किया है ।

यहांसे बहुत सुन्दर और सस्ते चित्र भेजे जा सकेंगे । इसमें एक विशेष बात यह होगी कि ये चित्र विद्यालयके चित्रकारी-क्लासके अध्यापक तथा छात्रोंके तैयार किये हुए होगें । हमें पूर्ण आशा है कि, हमारे भाई सब तरहके चित्र यहींसे मंगवानेकी कृपा करते रहेंगे ।

मैनेजर,
श्री वर्द्धमानजैन विद्यालय, जयपुर